ऑनलाइन शिक्षण और उसके निहितार्थ

शचीन्द्र आर्य

इस अप्रत्याशित समय में एक तरफ़ सारा विश्व एक वैश्विक संक्रामक महामारी से बाहर निकलने के रास्ते तलाश रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और बाक़ी राष्ट्रीय संस्थाएँ कोरोना से बचाव के तरीक़ों पर लगातार निर्देश दे रही हैं। दूसरी तरफ़ शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े लोगों के लिए यह समय नए प्रश्नों और चुनौतियों को उनके सामने लाया है। ऐसे समय में जबकि विद्यालय अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिए गए हैं, 'ऑनलाइन शिक्षण' एक विकल्प के रूप में उभर रहा है और हम अपने आसपास बहुत तेज़ गति से इसे विस्तार पाता हुआ देख रहे हैं।



इस लेख में हम कक्षा, शिक्षण विधि, अध्यापक की भूमिका, अध्यापक और विद्यार्थी के बीच बन रहे सम्बन्ध और उनके बीच हो रही अन्तर्क्रिया आदि बिन्दुओं को टटोलते हुए इस विषय पर अपनी समझ बनाने का प्रयास करेंगे।

पुरानी कक्षा

हम कक्षाओं को जिस रूप में देखते आ रहे हैं, उस ढाँचे का निर्माण भले औपनिवेशिक समय में हुआ हो, यह एक व्यवस्था के रूप में आज भी शैक्षिक कार्य व्यापार में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। यह कक्षाएँ कितनी सुविधापूर्ण हैं, कितनी अभावग्रस्त हैं, इस अधूरे प्रश्न में हमें कई प्रश्नों और दृष्टियों को मिलाना होगा, तब जाकर हम इन कक्षाओं का मूल्यांकन कर पाने में सक्षम होंगे। आज हम इसपर चर्चा न करते हुए वापस विषय पर लौटते हैं। हमारे हिस्से भी कभी-न-कभी ऐसे चित्र या व्यक्तिगत अनुभव आए होंगे, जहाँ चारदीवारी न हो, भीतर आने और जाने के लिए कोई दरवाज़ा न हो, बैठने के लिए बेंच न हों, बच्चे बोरे और पल्ली डालकर पेड़ या खुले आसमान के नीचे मिट्टी के फ़र्श पर बैठे हुए हों और अध्यापक एक कुर्सी पर टिकाए गए श्यामपट्ट पर कुछ काम करवा रहे हों, यह भी अपनी संरचना में एक कक्षा है। न्यूनतम स्तर पर होने के बावजूद यह कक्षा अध्यापक और विद्यार्थियों को एक दूसरे से अन्तर्क्रिया करने के अवसर देती है। यहाँ विद्यार्थियों को आपस में घुलने-मिलने का मौक़ा मिलता है। यह कक्षा सैद्धान्तिक रूप में चालीस-पचास मिनट की एक पाली पूर्वनिर्धारित विषय को पढ़ने के लिए दोनों पक्षों को मानसिक

रूप से तैयार करती है। प्रतिदिन बनता हुआ यह क्रम उनके लिए एक नियम की तरह ख़ुद को दोहराता है।

शिक्षा का समाजशास्त्र इस कक्षा को समाज का प्रतिरूप कहता है। उसके लिए यह कक्षा भविष्य की भावी भूमिकाओं के लिए विद्यार्थियों को तैयार करती है। यह भूमिकाएँ रूढ़िबद्ध भी हो सकती हैं और परिवर्तनकामी भी। वह इस कक्षा में एक जगह से चलकर इस दूसरी जगह तक आते हैं। इसे एक संस्था (परिवार) से चलकर एक दूसरी संस्था (विद्यालय) में आना भी कहा जा सकता है। वह जिस सफ़र को पैदल, साइकिल, गाड़ी और बस आदि से रोज़ तय करते हैं, वह यात्रा उनके अनुभव संसार का विस्तार करती है। वह आसपास की दुनिया से अन्तर्क्रिया कर पाते हैं। रास्ता जाना पहचाना होने के बावजूद यह अनुभव इकहरा नहीं होता। उन्हें रोज़ नए अनुभव करने का अवसर मिलता है। इस अर्थ में हम विद्यालय और विद्यालय में भी अपनी कक्षा तक पहुँचने की प्रक्रिया को कमतर करके नहीं आँक सकते। इस समय जबकि सबकुछ रुक गया है, यह प्रक्रिया भी अवरुद्ध हुई है। इस बात को भी रेखांकित किया जाना चाहिए। चर्चा में क्रमशः आगे बढ़ते हुए हम इसपर दोबारा आएँगे।

हो सकता है, एक क्षण के लिए कुछ पाठकों को यह चर्चा अतीत में ठहरी हुई लगने लगे। यह समाज के मूल्यों, आग्रहों का पुनरुत्पादन करने वाली कक्षा के कोरे सपाट वर्णन का भ्रम भी उन्हें दे सकती है। वह थोड़ी देर धैर्य रखें। अभी मेरे सामने प्रश्न है, यह कक्षाएँ इस आपात काल में जिस तरह ख़ुद को पुनर्परिभाषित करने का प्रयास कर रही हैं, हमें यह टटोलना होगा कि क्या इससे पहले कभी इतिहास में या हमारे समकालीन वर्तमान में विद्यालय इस तरह अनिश्चित काल के लिए बन्द किए गए हैं? हमें यह समझना होगा, आज हमारे सामने जिस तरह की आपात परिस्थितियाँ हैं और हम जिस तरह इसमें विद्यालय, कक्षा और शैक्षिक प्रक्रियाओं पर बात करना चाहते हैं, क्या अतीत में घटित हुई समस्याओं के बाबत हम इसी तरह प्रतिक्रिया देने के लिए ख़ुद को वहाँ उपस्थित पाते हैं?

इसे थोड़ा सरल करें, तब यह बात और सहजता से समझ में आने लगेगी।

हम पाते हैं, एक तरफ़ जिस तरह इस वैश्विक स्वास्थ्य संकट को देखते हुए विद्यालयों को अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिया है। ऐसी स्थिति में पढ़ाई का नुक़सान न हो इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रशासन ने अभी भी किसी-न-किसी रूप में इस 'कक्षा' को बन्द नहीं किया है। प्रश्न बस इतना-सा है कि क्या इससे पहले कभी ऐसा हुआ है, जब विद्यालय और कक्षा में यह अन्तर इतनी स्पष्टता से किया गया हो? अर्थात जिस तरह का विभेद इस संक्रमण के फैलाव को देखते हुए 'विद्यालय' और 'कक्षा' में दिख रहा है और किया जा रहा है, क्या इससे पहले भी ऐसा हुआ है। या तब 'विद्यालय' और 'कक्षा' में विभेद को सामने न लाकर विद्यालय बन्द करने का अर्थ सभी तरह की शैक्षिक प्रक्रियाओं का स्थगन माना गया। हमें इस चर्चा में विभेदीकरण की प्रक्रिया को भी ध्यान में रखना होगा।

इस अन्तर को समझे बिना हम इस विमर्श को समझ नहीं पाएँगे। यह संकट इसलिए भी अभूतपूर्व है क्योंकि इसने इतने बड़े स्तर पर विद्यालयों को बन्द करने के लिए सरकार को विवश कर दिया और देश के भीतर अप्रैल से प्रारम्भ होने वाले सत्र में विद्यार्थियों की पढ़ाई का नुक़सान न हो, इसके लिए प्रावधान खोजे जाने लगे। यह अतिरिक्त संवेदनशीलता ही नए तरह की कक्षाओं को बना रही है, जिसके बारे में अगले खण्ड में हम बात करने जा रहे हैं।

नई कक्षा

हमें यह ध्यान रखना होगा, हम ऐसी कक्षा के बारे में बात करने जा रहे हैं, जो 'लॉक डाउन' के बीच अपने अस्तित्व में आती है। एक तरफ़ सत्र ख़त्म नहीं हुआ था। विद्यार्थी

अभी पिछली कक्षाओं की परीक्षाएँ दे रहे थे। इस संकट के आ जाने के बाद कक्षा आठ तक के विद्यार्थियों को 'शिक्षा के अधिकार' के नियमों के अन्तर्गत अगली कक्षाओं में भेज दिया गया। कक्षा नौ और ग्यारह के लिए हर राज्य अपने-अपने स्तर पर प्रावधान कर रहे हैं। जिस जगह मैं रहता हूँ वहाँ ऐसी स्थितियों में परीक्षा लेने में आ रही व्यावहारिक समस्याओं को देखते हुए कुछ उपबन्धों के बाद वार्षिक परीक्षा परिणाम घोषित कर दिए गए हैं और जो छात्र-छात्राएँ किसी विषय में विफल या अनुत्तीर्ण पाए गए हैं, उन्हें उन विषयों की परीक्षा को दोबारा देने का एक अतिरिक्त अवसर दिया गया है। इधर बोर्ड कक्षाओं की परीक्षाओं को लेकर केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने भी अपने दिशा निर्देश जारी कर दिए हैं।

एक नई समाजशास्त्रीय श्रेणी के रूप में जो सबसे पहला प्रश्न हमारे सामने उपस्थित होता है, वह है– इन नई तरह की कक्षाओं में 'प्रवेश' की प्रक्रिया क्या है? जैसा कि हम परिचित हैं, पुरानी कक्षाओं में जहाँ विद्यार्थी अपने घर से चलकर विद्यालय पहुँचते थे, यह समय एक नई तरह की कक्षाओं की निर्मिति कर रहा है। यह कक्षाएँ अध्यापक और विद्यार्थियों के लिए भी उतनी नई हैं। यहाँ का ढाँचा पुरानी कक्षा के मुक़ाबले बिलकुल अलहदा है।

अध्यापक और विद्यार्थी दोनों पक्षों का इस कक्षा में प्रवेश 'तकनीक' की मध्यस्थता से सम्भव हो पाएगा। यह तकनीक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी पर आश्रित है। आप इसका सरल अर्थों में अनुवाद टच स्क्रीन मोबाइल फ़ोन, कम्प्यूटर, लैपटॉप और टैबलेट आदि कर सकते हैं। यही सब यंत्र 'ऑनलाइन शिक्षण' को सम्भव बनाते हैं।



देखने में यह बहुत सरल व्यवस्था लग सकती है। जहाँ अध्यापक और विद्यार्थी दोनों उक्त 'गैजेट' का इस्तेमाल करते हुए इस प्रक्रिया में सहभागी बन सकते हैं। अध्यापक 'गूगल क्लासरूम' में अपनी योजना के अनुसार पाठ्य सामग्री विद्यार्थियों को भेज सकते हैं। वह 'ज़ूम मीटिंग' पर सुविधानुसार पूर्वनिर्धारित समय पर वीडियो क्लास ले सकते हैं। कुछ बड़ी वैश्विक कम्पनियों के दबाव में किसी एप्लीकेशन के बारे में नकारात्मक समाचार आने लगें, तब आप 'गूगल मीट' का निश्चिन्त होकर प्रयोग कर सकते हैं। जहाँ आपको विश्वास दिलाया जा चुका है, उसका इस्तेमाल करते हुए किसी भी प्रकार से डेटा में सेंध नहीं लगाई जा सकती। कुछ दिनों में आप यह मानने लगते हैं।

एक अध्यापक की जगह स्वयं को रखकर जब थोड़ा ठहरकर सोचने लगता हूँ, तब यहाँ इन कक्षाओं में कुछ नई तरह की विषमताएँ और समस्याएँ जन्म लेती हुई दिखने लगती हैं। ऐसा नहीं है, भौतिक रूप से विद्यालय में स्थित पुरानी कक्षा के भीतर किसी भी प्रकार की विषमता या समस्या नहीं थी। न मेरा किसी भी तरह से यह मानना है कि वहाँ जाति, धर्म, सम्प्रदाय, भाषा, क्षेत्र और लिंग-आधारित पूर्वाग्रहों और धारणाओं से ग्रसित अध्यापकों को, जिनमें मैं ख़ुद को भी शामिल मानता हूँ, दोषमुक्त मान लिया जाए और हमारी पुरानी कक्षाएँ हर तरह से समता, समानता और न्याय के संवैधानिक मूल्यों को पोषित करती हुई आदर्श कक्षाएँ बन गई हैं। नहीं। ऐसा बिलकुल नहीं है। मुझे लगता है पुरानी कक्षाओं पर विपुल आलोचनात्मक साहित्य का उपलब्ध होना, उन्हें अलग तरह से बुनता है। हमें उनके साथ इन नई कक्षाओं के

भीतर व्याप्त असमानता और न्याय के प्रश्नों को अभी से टटोलना शुरू कर देना चाहिए। यहाँ अभी हम केवल नई कक्षाओं को केन्द्र में रखकर अपनी बात को आगे बढ़ाएँगे।

नई कक्षा में प्रवेश

जैसा कि हम पहले भी इस बात को रेखांकित कर चुके हैं कि सबसे मूलभूत प्रश्न इस नई कक्षा में प्रवेश को लेकर खड़ा होता है। हम सब बहुत अच्छी तरह से जानते हैं, हमारे देश के बहुसंख्यक विद्यार्थी सरकारी विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करते हैं। यह उनके लिए चुनने का प्रश्न है या उनकी विवशता, यह भी बहुत स्पष्ट है। वह जिन परिवारों से आते हैं, वहाँ से इस तरह की कक्षा में आना उनके लिए बहुत कठिनाई भरा अनुभव बनकर रह जाता है।

इन नई कक्षाओं में विद्यार्थी का प्रवेश बहुत ही जटिल प्रक्रिया है। चाहे यह प्रवेश मोबाइल जैसे साधारण दिखने वाले यंत्र के ज़रिए हो, उसे इस्तेमाल करने के लिए थोड़ा-बहुत तकनीकी ज्ञान और कौशल उनमें पहले से होना अनिवार्य है। पहले पहल, एक स्मार्ट मोबाइल फ़ोन की उपलब्धता बहुत विकट परिस्थितियों का निर्माण करती है। दूसरे, अगर वह घर में उपलब्ध है, तब एक अर्थ में घर की निर्मिति में उसपर किसका नियंत्रण रहता है, इन बिन्दुओं को हमें देखना होगा। मान लीजिए, एक घर में भाई और बहन दोनों की कक्षाएँ उस मोबाइल फ़ोन पर हो रही हैं, तब कौन उसे इस्तेमाल करेगा, यह बात समझना बहुत मुश्किल काम नहीं लगता है। थोड़ी देर के लिए हम एक आदर्श घर की कल्पना भी कर लें और घर में पिता भाई और बहन को अपनी-अपनी कक्षा के काम के लिए बराबर समय देकर इस समस्या को हमारे लिए हल भी कर दें, तब भी एक और समस्या वहाँ लगातार बनी रहती है, वह है उस मोबाइल फ़ोन पर अबाध इंटरनेट सेवा की उपलब्धता की। 'लॉक डाउन' जैसी स्थिति में जबकि परिवार के पास आय के कोई अन्य साधन न हों, बचत से ही घर चलाया जा रहा हो, यह स्थिति बहुत-से विद्यार्थियों ने भोगी होगी, इसमें कोई दो राय नहीं है। उनके अनुभव इससे भी बदतर रहे होंगे। ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

इन प्रश्नों की कई और परतें हो सकती हैं, जिनपर लगातार विचार करते रहने की आवश्यकता है।

कक्षा की व्याप्ति

यहाँ हमें यह ध्यान रखना होगा, इस पूरी प्रक्रिया में यह नई कक्षाएँ विद्यालय से निकलकर उनके घरों में स्थानान्तरित हो गई हैं। घर, जहाँ सरकार द्वारा जारी निर्देशों के बाद सभी सदस्यों को इसी के भीतर रहना है। क्या हम घर के माहौल को एक मोबाइल या लैपटॉप के ज़रिए एक कक्षा में परिवर्तित कर सकते हैं? इसका जवाब बहुत कठिन है। फिर भी हमें पता है, जैसा कि विद्यालय की कक्षा में चालीस या पचास मिनट की एक घण्टी में अध्यापक भले कुछ भी न कर पाता हो, पर वह समय एक विषय के लिए सुनिश्चित है। इसे अध्यापक और विद्यार्थी दोनों जानते हैं। जबकि यहाँ दोनों पक्षों द्वारा अपने-अपने घर में रहते हुए इस कक्षा को बनाने की कोशिश करनी पड़ती है। ऐसी स्थिति में वह उस घर को किस तरह की 'कक्षा' मान रहे होंगे?

भले यहाँ दृष्टि बहुत पुराने ढंग से काम कर रही हो, पर यही सच है। आप ख़ुद को कक्षा में महसूस नहीं कर पाते। एक अध्यापक के लिहाज़ से इस बिन्दु पर आकर, उसे हर विद्यार्थी से व्यक्तिगत रूप से कुछ बातें पूछनी होती हैं। उसके चेहरे के हावभाव से वह उसकी मनःस्थिति का कुछ आभास तो लगा ही पाते हैं। वह समय और परिस्थिति के अनुसार अपनी शैक्षिक युक्तियों को बदलते हैं, उनमें कुछ और बातें जोड़ने की कोशिश करते हैं। घर बैठकर बनाई गई इस कक्षा की इस रचना में वह किस तरह इस सम्बन्ध को बना पाएँगे, यह बहुत बड़ा प्रश्न है।

दूसरी बात, जो बच्चा आज विद्यालय की कक्षा में नहीं आया, वह दो-चार-दस दिन बाद

कक्षा में आ सकता है। उसे वर्दी और बस्ता लेकर विद्यालय आ जाना है। यहाँ वह 'स्मार्टफ़ोन' के साथ इस 'कक्षा' में शामिल होगा। अगर वह ऐसा कर पाने में अक्षम होता है, तब उसकी यह अनुपस्थिति बहुत लम्बी होने वाली है।

मानवीय सम्बन्धों की परिधि

यह नई कक्षा जिस तरह उभर रही है, वह सम्बन्धों को किस तरह प्रभावित करेगी या उन्हें बनाएगी, यह एक लम्बा वक़्त बीत जाने के बाद हमारे सामने होगा। लेकिन आज यह एक ऐसी व्यवस्था को पोषित कर रही है, जहाँ आपसी सम्बन्धों के लिए प्रत्यक्ष रूप से आमने-सामने रहने की कोई आवश्यकता नहीं है। सतह से देखने पर बहुत सरलता से हम महसूस कर सकते हैं, यहाँ अध्यापक और विद्यार्थी के बीच एक सम्बन्ध है भी तो वह बहुत सहज, स्वाभाविक और मानवीय नहीं है। यह विद्यार्थियों के लिए भी एक अधूरा अनुभव है।



हम अपने अनुभव से जानते हैं, विद्यालय की कक्षा में यह मौक़े स्वतः बन जाते हैं। विद्यालय की कक्षा वह जगह है, जहाँ अध्यापक और विद्यार्थी प्रतिदिन शैक्षिक गतिविधियों में संलग्न रहते हैं। अध्यापक अपने विषय के इतर भी विद्यार्थियों को मार्गदर्शन और प्रोत्साहन देते हैं, उनसे सीखते हैं। वह अपने अनुभव से विद्यार्थियों की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास भी करते देखे जा सकते हैं। यही कक्षा सहपाठियों को आपस में मिलने जुलने, एक-दूसरे की मनःस्थिति को जानने और उनपर बात करने का अवसर देती है।

वर्तमान में जिस तरह यह नई कक्षा समाजशास्त्रीय श्रेणी बनकर सामने आई है, वहाँ यह अवसर किस तरह बनेंगे, इसे अभी से बता पाना इतना आसान नहीं है। हमें यह भी देखना होगा, जिस तरह कक्षा में विद्यार्थी एक साथ मिलकर, बच्चे आपस में एक दूसरे की बातों को सुनकर उनकी क्रियाओं को देखकर और वहाँ मौजूद रहकर सीखते हैं, यहाँ उस तरह के अवसर और सम्भावनाओं को किस तरह से बुना जाएगा। क्या कुछ अध्यापक इन बिन्दुओं पर सोचना शुरू कर चुके हैं या वह किसी उत्तर की तरफ़ बढ़ रहे हैं?

ऐसा प्रतीत होता है, शिक्षणशास्त्र को निकट भविष्य में इसके उत्तरों की तलाश ज़रूर करनी होगी।

इस तरह की नई कक्षा में यह भी देखने वाली बात है कि यहाँ जितने विद्यार्थी हैं, वह अपने घरों में रहकर अध्ययन कर रहे हैं। इस शिक्षण प्रक्रिया में उनके साथी, उनके परिवार के सदस्य हैं। वह चाहकर भी सहपाठियों की जगह नहीं ले सकते। जिस तरह एक कक्षा में रहते हुए विद्यार्थी कुछ साथियों से मित्रता करते हैं, कुछ का साथ उन्हें अच्छा नहीं लगता। कुछ भावों को हमउम्र होने के नाते आपस में बाँटना सीखते हैं। एक दूसरे की बातों को सुनते हैं। कुछ से ईर्ष्या करते हैं। कुछ से प्रतियोगिता का भाव भीतर जागता है। ऐसे अवसर परिवार के साथ रहने पर किस तरह बन पाए होंगे? इसके साथ हमें यह भी देखना होगा, परिवार के सदस्यों के साथ इतना लम्बा वक़्त साथ बिताने की बाध्यता ने उनपर व्यावहारिक और मानसिक रूप से क्या प्रभाव डाला है? इन सम्बन्धों पर यह समय उनके भीतर किस तरह प्रतिक्रिया दे रहा है? परिवार के साथ उनके सम्बन्ध किस तरह पुनर्परिभाषित हुए हैं?

यह बात भी रेखांकित की जानी चाहिए कि दूसरी तरफ़ बैठे अध्यापक अपने घर से इन शैक्षिक गतिविधियों को संचालित करने का प्रयास कर रहे हैं। उनसे लगातार एक समान ऊर्जा के साथ 'घर से काम' करने की अपेक्षा रहती है। इससे काम करने की क्षमता और उनके मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ रहा है? हमें देखना होगा, उनके सामने किस तरह की चुनौतियाँ और समस्याएँ आईं। वह ख़ुद को अपने परिवार के बीच रहते हुए किस तरह अध्यापक की भूमिका में ला पाते होंगे? क्या यहाँ भी लैंगिक विविधता कुछ नए अनुभवों को बना रही है? क्या महिला अध्यापिकाओं के लिए 'घर से विद्यालय के काम' करना अधिक जटिल बन जाता है? वह घर और विद्यालय के काम के बीच किस तरह सन्तुलन बना पाई होंगी? क्या पुरुष अध्यापकों के पास ऐसी कोई समस्या और चुनौती नहीं आई होगी? हमें इन सभी प्रश्नों को चर्चा के केन्द्र में लाना होगा।

अगर हम चाहें, तब भी इन सभी बिन्दुओं और प्रश्नों पर अभी कोई तयशुदा बात कह नहीं पाएँगे। यह 'नई कक्षा' इन विषयों पर मौन है। हो सकता है, निकट भविष्य में या ऐसी असहज, अस्वाभाविक और विकट परिस्थिति में लम्बा वक़्त गुज़ारने के बाद कुछ बातें स्पष्ट हो पाएँ। हम तब शायद नए सिरे से बन रहे इन सम्बन्धों और प्रक्रियाओं को बेहतर तरीक़े से समझ पाएँ। ऐसी स्थिति में बहुत संवेदनशील होकर आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

शिक्षण प्रक्रिया और अधिगम

हमें इस विषय पर बात करने से पहले यह ध्यान रखना चाहिए कि इस नई कक्षा के लिए वही पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक आदि निर्धारित हैं, जो विद्यालय की कक्षाओं के लिए स्वीकृत थीं। वर्तमान परिस्थिति में यह शिक्षण प्रक्रिया 'मल्टीमीडिया के उपकरण' जैसे 'मोबाइल' या 'कम्प्यूटर' और 'लैपटॉप' की सहायता से संचालित की जा रही हैं। इसके लिए अध्यापक और विद्यार्थी दोनों को पहले से एक जगह तय करनी होगी, जहाँ कक्षा के सभी विद्यार्थी एक साथ उपस्थित हों और बाक़ी प्रक्रियाएँ प्रारम्भ की जा सकें।

यह जगह, जिसे हम 'नई कक्षा' कह रहे हैं, यह किसी एप्लीकेशन के उपयोग द्वारा बनाई जा सकती है। यह 'व्हॉट्सएप' का कोई ग्रुप हो सकता है। इसे 'गूगल क्लासरूम' पर विद्यार्थियों के ई-मेल आईडी को जोड़कर बनाया जा सकता है। आप किसी 'कॉर्पोरेट मीटिंग एप' पर अपनी क्लास को लाइव वीडियो के रूप में रख सकते हैं, जिसमें विद्यार्थी सक्रिय रूप से सहभागी बन सकते हैं। अध्यापक इसके लिए 'ज़ूम' का उपयोग कर रहे थे लेकिन सरकार की तरफ़ से दिशा निर्देश आने के बाद वह इसका उपयोग करने से बचने लगे हैं।

इस प्रक्रिया को फिर से दोहराने का एक तात्पर्य यह भी है कि हम यह जान लें, अध्यापक और विद्यार्थी इस 'नई कक्षा' को कहाँ सृजित कर रहे हैं। ध्यान से देखिए यह कहाँ है। अब हम 'कैसे' वाले सवाल पर लौटते हुए 'प्रक्रिया' को जानने का प्रयास करेंगे। यहाँ इस खण्ड में एक साथी अध्यापक के अनुभव से कुछ बातें रखूँगा।

वह अनौपचारिक बातचीत में कई बार इस बात को कह चुके हैं कि उनके लिए एक अध्यापक के तौर पर इस वैकल्पिक व्यवस्था को कक्षा की तरह स्वीकार कर पाना बहुत कठिन रहा है। जिस कक्षा में सभी विद्यार्थी उपस्थित न हों और उनकी अनुपस्थिति एक विषमता को जन्म दे रही हो, जिसपर हम ऊपर संकेत कर चुके हैं, यह कहीं से भी एक सन्तोषजनक स्थिति नहीं कही जा सकती। उनके मन में यह विचार स्थाई भाव की तरह बना रहता है कि कुछ विद्यार्थी उनकी इस कक्षा से बाहर रह गए हैं। हम सहज ही यह अनुमान लगाकर समझ सकते हैं कि सीखने की जो प्रक्रिया पहले ही विषमता पर आधारित हो, वह किस तरह की व्यवस्था को बनाएगी और उसे पोषित करेगी।

बातचीत में वह आगे कहते हैं, हिन्दी अध्यापक के नाते जब तक वह चार तरह के कौशलों (सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना)



को एक साथ विकसित करने के अवसर नहीं बना पाएँगे, तब तक प्रक्रिया को अधूरा ही मानेंगे। एक साथ मतलब साथ-साथ। उनकी दृष्टि में यह छूट रहा है। भेजे गए पाठ को एक साथ पढ़ना और अलग-अलग पढ़ना दो तरह की प्रक्रियाओं की तरफ़ इशारा करता है। दोनों ही स्थितियों में वह यह सुनिश्चित नहीं कर पा रहे कि पाठ प्रत्येक विद्यार्थी ने पढ़ लिया होगा। कक्षा में तो एक ही पाठ के छोटे-छोटे हिस्सों को कुछ विद्यार्थियों को आगे बुलाकर पढ़ने के लिए कहा जा सकता है। यहाँ वह सुविधा नहीं है। इसके साथ वह इस बिन्दु को भी जोड़ते हैं कि कक्षा में कुछ अंशों पर चर्चा करना विद्यार्थियों को कल्पना, चिन्तन और मनन के लिए प्रस्थान बिन्दु या अवसर बनकर आते हैं, लेकिन यहाँ वह इसे कर पाने में असमर्थ हैं।

उन्होंने 'ज़ूम' एप्लीकेशन पर कुछ कक्षाओं को लेने का प्रयास भी किया लेकिन विषम सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थियों के साथ यह अधिक कारगर साबित नहीं हुआ। कोई यह कैसे सुनिश्चित कर सकता है कि उनकी इस कक्षा में आने वाले विद्यार्थी के पास अपना निजी मोबाइल फ़ोन होगा। घर में भाई-बहन हैं। उनके अध्यापक उनकी कक्षाएँ भी संचालित कर रहे होंगे। तब कौन कितनी देर तक मोबाइल का इस्तेमाल करे, यह विकट स्थिति है। वह आपस में यह निर्णय कैसे करते होंगे, किसकी कक्षा को अभी महत्त्व नहीं देना है और किसकी कक्षा बहुत ज़रूरी है, उसे किसी भी हालत में छोड़ा नहीं जा सकता।

फिर वह परिवार भी है, जिसके सदस्य ऐसे संकट के समय में शहर के भीतर या बाहर अपने मित्रों और परिजनों के सम्पर्क में रहना चाहते हैं। अगर कक्षा के बीच में फ़ोन आ जाता है, कोई बात करना चाहता है, तब ऐसी किसी कक्षा का कोई अर्थ नहीं रह जाता। एक बार के लिए मान भी लीजिए, उस वक़्त वह फ़ोन पर बात नहीं करेंगे, तब भी सबके पास मोबाइल पर इंटरनेट डेटा की अलग-अलग सीमाएँ हैं। वह उसे कुछ क़ीमत चुकाकर ख़रीदते हैं। क्या वह एक ही कक्षा पर पूरे दिन का डेटा ख़र्च कर सकता है? ऐसी बहुत-सी समस्याओं को वह गिनाते चले गए।

सरकारी विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थी जिस तरह के घरों में रहते हैं, क्या वह इस तरह की कक्षाओं के लिए उन घरों के भीतर कोई कोना या कोई विशेष स्थान को सुनिश्चित कर पाएँगे। ऐसा स्थान, जहाँ वह अपना एकान्त

कुछ देर के लिए बनाए रख सकते हैं। जहाँ घर ही एक या दो कमरों का हो, वहाँ आप आदर्श स्थिति की कल्पना नहीं कर सकते। ख़ुद विद्यार्थी के मन में अपने घर की संरचना को लेकर जिस तरह के हीन भाव पैदा होने लगेंगे, उनसे जूझने या निपटने के लिए आपने उन्हें कभी कुछ सिखाया है? वह ऐसी स्थिति में क्या करें?

इन विसंगतियों के बीच वह जितना भी पढ़ा पा रहे हैं, वह उस पूरी प्रक्रिया को एक उदाहरण देकर विस्तार से चर्चा करते हैं। वह बताते हैं, कक्षा सात की हिन्दी की पाठ्यपुस्तक *वसंत* भाग-2 में पहला पाठ एक कविता है। कविता का नाम है 'हम पंछी उन्मुक्त गगन के'। इसे शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने लिखा है। उन्होंने इस पाठ को एनसीईआरटी की वेबसाइट से डाउनलोड करके उसकी पीडीएफ़ फ़ाइल विद्यार्थियों के साथ साझा की। अब उसमें कई विद्यार्थियों को इसका क्या करना है, यह समझ नहीं आ रहा था। मतलब, पीडीएफ़ फ़ाइल को डाउनलोड कैसे किया जाता है, वह उन्हें नहीं पता था। कैसे वह उसे डाउनलोड करके पढ़ सकते हैं, वह इससे अनभिज्ञ थे। वहीं कक्षा के कुछ विद्यार्थी अभी अक्षरों को जोड़कर पढ़ने में इतने समर्थ नहीं हुए हैं, इसका ख़याल करके जब कोई विकल्प काम नहीं आया, तब 'यूट्यूब' का एक वीडियो उन्हें व्याख्या या पाठ को समझाने के लिए भेजना पड़ा।

अब पंक्तियों के अर्थ या उसकी व्याख्या तक पहुँचने में अध्यापक की भूमिका जिस तरह से कक्षा में हो सकती थी, वह भी यहाँ स्थगित हो गई। वह इस प्रक्रिया को होने ही नहीं देता। यह सबसे बड़ा नुक़सान है। वह इस बात को भी रेखांकित करते हैं, इसमें एक हानि यह भी है कि विद्यार्थी उस वीडियो द्वारा अभिधा में उन पंक्तियों के अर्थ तक तो पहुँच जाते हैं, लेकिन उसकी और क्या व्यंजनाएँ हो सकती हैं, वहाँ तक पहुँचने का यह अवसर उक्त वीडियो को देखते हुए मिल नहीं पाता है। कक्षा में विद्यार्थी जिस तरह कविता से अन्तर्क्रिया कर पाते, वह इस नई कक्षा ने ग़ायब कर दिया। किसी वेबसाइट पर उपलब्ध वीडियो कल्पना, चिन्तन और मनन के लिए किन अवसरों को सृजित करता है, किन अवसरों को हमेशा के लिए छीन लेता है, यह अपने-आप में बहुत बड़ा प्रश्न है।

इन सबके बीच कई बार विद्यार्थियों के अभिभावक अपने बच्चों की आँखों पर पड़ने वाले असर की चिन्ता को फ़ोन पर बातचीत के दौरान उनसे साझा कर चुके हैं। वह इसके प्रति भी अपनी चिन्ता प्रकट कर चुके हैं कि जब विद्यालय खुलेंगे, तब मोबाइल के साथ समय बिताने की उनकी आदत उनके अध्ययन पर कोई नकारात्मक असर न डाले।

ऐसे कई सारे उदाहरण और हो सकते हैं। अपने विषय के अनुसार अध्यापक इस माध्यम से होने वाले शिक्षण की सीमाओं को जान रहे होंगे। जहाँ शिक्षण इस क़दर तकनीकी और यांत्रिक प्रक्रिया पर आश्रित हो गया हो, वहाँ यह सवाल भी पूछा जाना लाज़िमी है कि क्या हमें यहाँ कहीं चेतना के विकास के अवसर दिख भी पा रहे हैं। अगर शिक्षा परिवर्तन की वाहक मान ली जाए, तब ध्यान से देखिए यह किस तरह घटित हो रहा है। इस सारे वृत्तान्त में आप यह भी देख पा रहे होंगे, यहाँ जिस भी रूप में शिक्षण प्रक्रिया घटित हो रही है, उसने अध्यापक और विद्यार्थी की भूमिकाओं को नए अर्थ तो दिए हैं लेकिन उनमें गुणात्मक परिवर्तन कितना हुआ, यह एक बृहद विचार विमर्श के बाद ही हमारे सामने स्पष्ट हो पाएगा। किसी एक व्याख्या से इसे सम्पूर्णता में नहीं समझा जा सकता।

भविष्य के लिए तैयारी

भविष्य की ओर चलते हुए हम अपनी चर्चा को समाप्ति की ओर ले जा रहे हैं, लेकिन उससे पहले कुछ प्रश्नों को इस आलेख के प्रारम्भ में उठाया गया था, उनपर थोड़ा प्रकाश डालना उचित रहेगा। जैसा कि ऊपर संकेत किया है, वहाँ एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु था, वर्तमान में जिस तरह की परिस्थितियों का सामना हम कर रहे

हैं, क्या इससे पहले कभी हमने इस तरह की आकस्मिक और अप्रत्याशित परिस्थितियों का सामना किया है? अगर हाँ, तब उस समय हमारी क्या प्रतिक्रिया रही थी? क्या हमने उनसे भविष्य के लिए कुछ सबक सीखे या उन्हें ऐसे ही जाने दिया?

अगर हम सिर्फ़ भारत के सन्दर्भ को ही लेकर चलें, तब हम पाते हैं सशस्त्र संघर्ष के



बाद या हिंसा से प्रभावित क्षेत्रों में विद्यालय पहले भी अनिश्चित काल के लिए बन्द किए जाते रहे हैं। कई जगहों पर जब कभी बाढ़ और चक्रवाती तूफ़ान जैसी प्राकृतिक आपदाएँ आ जाती हैं, तब भी ऐसा किया जाता रहा है। कर्फ़्यू हो, हिंसा हो, बाढ़ के बाद सम्पर्क करने के रास्तों का टूट जाना हो या तूफ़ान के बाद चारों तरफ़ बर्बादी का मंज़र हो, हमें यह देखना होगा, ऐसी स्थितियों को लेकर हमारे पूर्व अनुभव हमें कुछ बता पाने की स्थिति में हैं? क्या हमारे शिक्षा के विमर्श में ऐसी कोई जगह है, जहाँ पहुँचकर हम इन विषयों पर थोड़ी देर बात भी कर सकें।

अगर आज हमें शिक्षा विमर्श की दुनिया में सशस्त्र हिंसा को लेकर कुछ गम्भीर और ठोस बातें दिखाई देती हैं और हम संघर्ष के क्षेत्रों (कॉन्फ़्लिक्ट ज़ोन) में बचपन और उन बच्चों के शिक्षा के अधिकार को महत्त्व देना सीख रहे हैं। तब हमें यह देखना होगा किस विचार प्रक्रिया से गुज़रने के बाद यह प्रस्थान बिन्दु हम तक पहुँच पाए हैं।

इतिहास हमें बताता है, वैश्विक स्तर पर युद्ध को लेकर एक बेचैनी हमेशा बनी रही है। किसी भी युद्ध की सबसे बड़ी क़ीमत किसी भी स्थान विशेष के बच्चे उठाते हैं। युद्ध जैसी मानव निर्मित आपदा को हम प्रथम विश्व युद्ध से भी पहले से झेलने के लिए अभिशप्त रहे हैं। वैश्विक स्तर पर इसके बाद से शिक्षा की भूमिका को दोबारा से टटोले जाने का दौर बहुत तेज़ी से बदलता है। इस श्रृंखला में बहुत विस्तार में न जाते हुए भी हम आगे चलकर पाते हैं, यह अकस्मात नहीं था कि बच्चों के लिए पचास वर्षों तक काम कर लेने के बाद 'यूनिसेफ़' युद्ध, हिंसा और उत्पीड़न की विभीषिका को झेलते बचपन पर 1996 में *स्टेट ऑफ़ द वर्ल्ड चिल्ड्रन* रिपोर्ट जारी करता है। वैश्विक स्तर पर बहुत-से देशों में इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। भारत में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् (एनसीईआरटी) द्वारा राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के साथ 'शान्ति के लिए शिक्षा' पर 'राष्ट्रीय फ़ोकस समूह' गठित किया गया, जिसका उद्देश्य इस अभूतपूर्व हिंसा के दौर में 'शान्ति के लिए शिक्षा' सीखने को अपना आधार बनाना था। इसमें अधिगम के भावनात्मक, सम्बन्धात्मक, और अनुभवात्मक पक्षों को शिक्षा में शामिल किया गया।

यहाँ इस भूमिका को बाँधने का एकमात्र उद्देश्य केवल इतना है कि हमें यह ध्यान देना होगा कि कोई भी विमर्श अचानक से निर्वात में जन्म नहीं लेता। किसी वैचारिकी को खड़े होने में वर्षों लग जाते हैं। बहुत लम्बे समय तक संवाद को स्थापित करना पड़ता है। उसके बाद कहीं वह किसी ठोस आकार में रूपान्तरित हो पाता है।

हम थोड़ा सक्रिय होकर अपने आसपास देखेंगे तो पाएँगे, भारत जैसे देश में जिस तरह विद्यालयी व्यवस्था का विस्तार और फैलाव है, उसमें कई परतें अभी हमारे सामने खुली भी नहीं होंगी। यह प्रक्रिया इस रूप में भी जटिल होने जा रही है क्योंकि हमने हर साल घटित होने वाली ऐसी किसी घटना को कभी अपनी चर्चा का बिन्दु

नहीं बनाया जहाँ दो जगहों के बीच बाढ़ के कारण पुल टूट जाने के बाद विद्यार्थियों के स्कूल पहुँचने के संकट का मुद्दा प्रमुख हो। यह तो मात्र एक उदाहरण है। कितनी ही ऐसी घटनाएँ हमारे देश में घटित होती रही हैं, जिसके कारण जो सम्बन्ध और सम्पर्क किसी आपदा के कारण टूट गया और बन नहीं पाया, हमने उसका अनुवाद कभी इस तरह नहीं किया, जैसा इस वर्तमान परिदृश्य में हम कर रहे हैं। पढ़ाई और सत्र का नुक़सान तो तब भी उतना ही हो रहा होगा। विद्यार्थी जितने दिन विद्यालय से दूर रहेंगे, यह किसी बड़ी समस्या के रूप में यदि हमें आज दिखने लगा है, तब हमें ऐसी हर आपदा और आकस्मिक घटना के बाद और उसके दौरान बनने वाली खाली जगह के लिए विमर्श प्रारम्भ करना होगा।

क्या हम यह सोच भी पा रहे हैं कि जिस तकनीक के माध्यम से हम यह नई कक्षाएँ रच रहे हैं, वह कैसे समता, समानता और विविधता जैसे बिन्दुओं को समाहित करते हुए अपने द्वारा बनाई गई विषमता, समस्याएँ और विसंगतियाँ ख़ुद से दूर कर पाएँगी। जब स्थितियाँ सामान्य मान ली जाती हैं, तब भी एक भय और अनिश्चितता का माहौल चारों तरफ़ रहता है। उसमें अध्यापकों और बच्चों से किस तरह की अपेक्षा की जाती है?

इन परिस्थितियों का हमारी शैक्षिक प्रक्रियाओं पर कितना दूरगामी प्रभाव पड़ने वाला है, हम ठीक-ठीक आकलन भी नहीं कर पा रहे हैं। लगता यही है, इस वैश्विक महामारी के गुज़र जाने के बाद भी इसका असर और प्रभाव बहुत लम्बे समय तक शिक्षा व्यवस्था, शिक्षक, विद्यार्थी, पाठ्यचर्या, पाठ्यपुस्तक, तकनीक आदि पर बना रहेगा। ऐसी आपात स्थिति में आज हम अपने शैक्षिक ढाँचे को किस तरह से पुनर्रचित या पुनर्गठित कर सकते हैं, यह हम



जानते नहीं हैं। किन्तु हमारे पास आज उठ रहे प्रश्नों के कुछ सम्भावित उत्तरों तक पहुँचने की कुछ युक्तियाँ होनी चाहिए। हमें ऐसे भविष्य के लिए कुछ स्थापनाओं, धारणाओं और सिद्धान्तों आदि को अभी से टटोलना प्रारम्भ कर देना चाहिए, जहाँ हम ऐसे आकस्मिक वैश्विक संकट से ख़ुद को जूझने के लिए पहले से ज़्यादा कुशल और साधनसम्पन्न बना पाएँ। हम सबको व्यवस्थित होकर इस नई बन रही संरचना के प्रति उदासीनता को एक तरफ़ रखकर आगे बढ़ना होगा। हमें कुछ मूलभूत प्रश्नों को गढ़ना होगा, उन्हें तराशना होगा और उनके उत्तर तलाशने होंगे।

● सभी चित्र इंटरनैट से साभार

सन्दर्भ

National Focus Group Position Paper on 'Education for Peace' (2006), NCERT, Delhi.

The State of the World's Children (1996), OUP, New York.

शचीन्द्र आर्य वर्तमान में दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग (सीआईई) से 'ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता और शिक्षा की अन्तर्क्रिया' विषय पर शोधरत। 'ईपीडब्लू', 'शिक्षा विमर्श' और 'पाठशाला भीतर और बाहर' में शोध लेख प्रकाशित।
सम्पर्क : shachinderarya@gmail.com